राजा वज्राङ्गद द्वारा अरुणाचलेश्वर की आराधना

पाण्ड्यदेश में वज्राङ्गद नाम से प्रसिद्ध एक राजा थे। वे बड़े धर्मात्मा, न्याय-वेत्ता, शिवपूजापरायण, जितेन्द्रिय, गम्भीर, उदार, क्षमाशील, शान्त, बुद्धिमान्, एकपत्नीव्रती और पुण्यात्मा थे। राजा वज्राङ्गद शीलवानों में सबसे श्रेष्ठ थे और शत्रुओं को जीतकर समूची पृथ्वी का शासन करते थे। एक दिन घोड़े पर सवार हो वे शिकार खेलने के लिये निकले और अरुणाचलतक के दुर्गम वन में गये। उन्होंने वहाँ किसी कस्तूरी-मृग को देखा। उसके शरीर से सब ओर बहुत सुगन्ध फैल रही थी। उसे देखते ही राजा ने कौतूहलवश उसके पीछे घोड़ा दौड़ाया। मृग वायु के समान वेग से भागा और अरुणाचल पर्वत के चारों ओर चक्कर लगाने लगा। तब अधिक परिश्रम होने के कारण राजा कान्तिहीन होकर घोड़े से गिर पड़े। उस समय मध्याह्नकालीन सूर्य के प्रखर ताप से उन्हें अत्यन्त पीड़ा हुई। वे क्षणभर के लिये अपने आपकी भी सुध-बुध खो बैठे। तत्पश्चात् उन्होंने सोचा-'मेरी शक्ति और धैर्य का यह अकारण ह्रास कहाँ से हो गया? वह हृष्ट-पुष्ट मृग मुझे इस पर्वत पर छोड़कर कहाँ चला गया?' राजा जब इस प्रकार की चिन्ता से व्याकुल और अज्ञान से दुखी हो रहे थे, इसी समय आकाश सहसा विद्युत्पुञ्ज से व्याप्त सा दिखायी दिया। उनके देखते-देखते घोड़े और मृग ने तिर्यग् (पशु) योनि का शरीर त्याग कर क्षणभर में आकाशचारी विद्याधर का रूप धारण कर लिया। उनके मस्तक पर किरीट, कानों में कुण्डल, कण्ठ में हार और बाहों में भुजबन्ध शोभा पा रहे थे। दोनों रेशमी धोती और दिव्य पुष्पों की मालाएँ धारण करके शोभा पा रहे थे।

यह सब देखकर राजा का चित्त आश्चर्यचकित हो रहा था; तब वे दोनों विद्याधर बोले-'राजन्! विषाद करने की आवश्यकता नहीं। आपको मालूम होना चाहिये, हम दोनों भगवान् अरुणाचलेश्वर के प्रभाव से इस उत्तम दशा को प्राप्त हुए हैं।' उनकी इस बात से राजा को कुछ आश्वासन सा मिला। तब वे हाथ जोड़कर उन दोनों से विनयपूर्वक बोले-'आप दोनों कौन हैं? मेरा यह पराभव किस कारण से हुआ है? आप दोनों कल्याणकारी पुरुष हैं, अतः मुझे मेरी पूछी हुई बातें बताइये? क्योंकि सङ्कट में पड़े हुए पुरुषों की रक्षा करना महापुरुषों का महान् गुण है।'

राजा के ऐसा प्रश्न करने पर कलाधर ने कान्तिशाली की आज्ञा से इस प्रकार कहा- "राजन्! हम दोनों पहले विद्याधरों के राजा थे। हममें बसन्त और कामदेव की भाँति परस्पर बड़ी मित्रता थी। एक दिन मेरुगिरि के पार्श्वभाग में दुर्वासा के तपोवन में, जहाँ पहुँचना अत्यन्त कठिन है, हम दोनों जा पहुँचे। वहाँ मुनि की परम पवित्र पुष्पवाटिका थी, जो एक कोसतक फैली हुई थी। वह वाटिका शिवाराधन के काम में आती थी। हमने देखा-खिले हुए फूलों से वह बड़ी मनोहर जान पड़ती थी। हम लोग तत्त्वचिन्तन में तत्पर हो फूल तोड़ने की उत्कण्ठा से उस फुलवाड़ी में घुस गये। उस रमणीय स्थान के प्रति प्रेम हो जाने से हमारा मित्र यह कान्तिशाली गर्व से फूल उठा और बारंबार वहाँ की भूमि पर पैर पटकता हुआ इधर-उधर विचरने लगा। मैं वहाँ पुष्पों की अतिशय सुगन्ध से मोहित हो

दुर्वासनावश विकसित पुष्पों पर हाथ रख दिया करता था।

"मेरे इस अपराध के कारण बिल्ववृक्ष के नीचे व्याघ्रचर्म के आसन पर बैठे हुए तपोराशि दुर्वासा मुनि आग की भाँति जल उठे और अपनी दृष्टि से मानो हमें जला डालेंगे इस प्रकार देखते हुए हमारे समीप आ गये। आकर हमें फटकारते हुए बोले–'ओ पापियों! तुम लोगों ने सज्जनोचित सदाचार का उल्लङ्घन किया है और अत्यन्त अहङ्कार में भरकर मेरे इस पवित्र तपोवन में विचर रहे हो। मेरा यह उद्यान सब प्राणियों का पोषण करनेवाला है। इसे अपने चरणों के प्रहार से दूषित करनेवाला यह पापी संसार में घोड़ा हो जाय तथा दूसरे की सवारी ढोने के कारण कष्ट उठाता रहे तथा दूसरा जो यह अत्यन्त उग्र स्वभाववाला है, फूलों की सुगन्ध के प्रति लोभ रखकर आया है इसलिये कस्तूरीमृग होकर पर्वत की कन्दरा में गिरे।'

"इस प्रकार भयानक रोष से वज्र के समान दुर्वासा मुनि का शाप प्राप्त होने पर उसी क्षण हम दोनों का गर्व गल गया और हम मुनि की शरण में गये। उनके चरणारविन्दों को अपने हाथों से पकड़कर हमने प्रार्थना की–'भगवन्! आपका यह शाप अमोघ है, अतः यह बताने की कृपा करें कि इसका अन्त कब होगा।' राजन्! तब हम दोनों को अत्यन्त दीन एवं दुखी देखकर मुनि के हृदय में दया का सञ्चार हो आया। वे करुणा की वर्षा से शीतलस्वभाव होकर बोले–'अरे! तुम दोनों अब कभी खोटी बुद्धि का आश्रय लेकर ऐसे बर्ताव न करना। अरुणाचल की परिक्रमा करने से तुम्हारे इस शाप का निवारण होगा। अरुणाचल साक्षात् भगवान् शिव के स्वरूप हैं। प्राचीन काल में इन्द्र, उपेन्द्र और यम आदि दिक्पालों ने सैकड़ों वर्षोंतक इनकी उपासना की थी। उसी समय नन्दनवन के देवता इन्द्र ने देवाधिदेव महादेवजी को एक लाल रंग का अद्‌भुत फल भेंट किया। वह मन को लुभा लेनेवाला था। उसे देखकर गणेश और कार्तिकेय दोनों भाई अपने बालक स्वभाव के कारण कौतूहलवश उसकी ओर आकृष्ट हो गये और अपने पिता भगवान् शङ्कर से वह फल माँगने लगे। तब भगवान् शिव ने वह फल अपनी मुट्ठी में छिपा लिया और उसकी अभिलाषा रखनेवाले दोनों कुमारों से इस प्रकार कहा, 'पुत्रो! तुम दोनों में से जो भी लोकालोक पर्वत से घिरी हुई इस समूची पृथ्वी की परिक्रमा करने में समर्थ हो उसे ही यह फल दूँगा।' पार्वतीवल्लभ शिव ने जब मुसकराते हुए ऐसी बात कही, तब कार्तिकेयजी ने समस्त पृथ्वी की परिक्रमा आरम्भ कर दी। परंतु गणेशजी अरुणाचलरूपी पिता महादेवजी की ही परिक्रमा करके तत्काल उनके सामने खड़े हो गये। उनकी यह चतुराई देखकर भगवान् शिव ने स्नेह से उनका मस्तक सूँघकर उन्हीं को वह फल दे दिया और यह वरदान दिया कि 'आज से तुम सभी फलों के अधिपति हो जाओ।' गणेशजी को ऐसा वर देकर भगवान् शङ्कर ने वहाँ आये हुए समस्त देवताओं और असुरों से कहा–'यह अरुणाचल मेरा स्थावर विग्रह है। जो इसकी परिक्रमा करता है वह समस्त ऐश्वर्यों का भागी होता है। जो पुरुष इस पर्वत को अपने दाहिने रखकर इसके चारों ओर चक्कर लगाता है वह चक्रवर्ती राजा होकर अन्त में सर्वोत्कृष्ट सनातन पद को प्राप्त कर लेता है।' महोदवजी की इस आज्ञा से सब देवताओं ने अरुणाचल की परिक्रमा करके

अपना-अपना अभीष्ट मनोरथ प्राप्त किया। अतः तुम दोनों भी जब अरुणाचल की प्रदक्षिणा कर लोगे, तब उससे तुम्हारे शाप का अन्त हो जायगा। पशुयोनि में रहने पर भी पाण्ड्यनरेश वज्राङ्गद के सम्बन्ध से तुम दोनों के द्वारा अरुणाचल की परिक्रमा सम्पन्न होगी।'

"नृपश्रेष्ठ! तदनन्तर मेरा मित्र कान्तिशाली काम्बोजदेश में घोड़ा हुआ और आपकी सवारी में आया। मैं भी कस्तूरी मृग होकर अपने ही शरीर से उत्पन्न सुगन्ध के मद से उन्मत्त हो इस अरुणाचल पर विचरने लगा। धर्मात्मन्! आपने मृगया के बहाने इस समय यहाँ आकर हम दोनों से अरुणाचलनाथ की परिक्रमा करवा दी। आपने सवारी पर चढ़कर यह परिक्रमा की है। इस दोष से आपकी ऐसी शोचनीय दशा हो गयी है। हम दोनों ने पैदल चलने के पुण्य से अपने पूर्व पद को प्राप्त किया। महाराज! आपके ही सम्बन्ध से हम इस पशुयोनि के बन्धन से छूटकर अपने धाम को प्राप्त हुए हैं; इसलिये आपका सदा ही कल्याण हो।"

यों कहकर कलाधर अपने मित्र कान्तिशाली के साथ जब अपने धाम को जाने लगा, तब राजा ने हाथ जोड़कर कहा-'आप दोनों तो अरुणाचलरूपी भगवान् शङ्कर के प्रभाव से शापरूपी समुद्र के पार हो पुनः अपने पद को प्राप्त हो गये, परंतु मेरा चित्त भ्रान्त सा हो रहा है। मेरे नेत्र अन्धे से हो गये हैं और ऐसा जान पड़ता है मानो मेरे प्राण निकले जा रहे हैं। अतः ऐसा होने में दैवबलका ही उत्कर्ष सूचित होता है।'

कलाधर ने कहा-राजन्! मैं तुमसे तुम्हारे हित के लिये भी जो कहता हूँ उसे निश्चिन्त तथा एकाग्रचित्त होकर सुनो। संसार की सृष्टि, पालन और संहार करनेवाले भगवान् महेश्वर के स्वरूपभूत अरुणाचलनाथ करुणा के सागर हैं। तुम इन्हीं में अपना मन लगाओ (इनकी महिमा तो तुमने इस समय अपनी आँखों देखी जो कि पशुयोनि में पड़े हुए हम दोनों को इन्होंने ऐसे दिव्य पद की प्राप्ति करा दी)। तुम भी पैदल होकर भगवान् अरुणाचल की परिक्रमा करो। इन्हें कस्तूरी की गन्ध बहुत प्रिय है इसलिये कस्तूरी के चन्दन और कचनार के फूलों से तुम इनकी पूजा करो। प्रभो! तुम्हारे पास जितनी सम्पत्ति है वह सब भगवान् अरुणाचल के मन्दिर, गोपुर, चहारदिवारी तथा आँगन का चौक आदि बनवाने के लिये दे डालो। ऐसा करने से शीघ्र ही तुम्हें बहुत बड़ी सिद्धि प्राप्त होगी। मनु, मान्धाता, नाभाग तथा भगीरथ से भी उत्कृष्ट पद तुम्हें प्राप्त हो जायगा।

तत्काल अपने धाम को प्राप्त करनेवाले उन दोनों विद्याधरों का यह वचन सुनकर राजा वज्राङ्गद ने सन्देहरहित चित्त से भगवान् अरुणाचलनाथ के प्रति भक्ति बढ़ायी और उसी समय विशेष संयम-नियम का पालन आरम्भ किया।

राजा वज्राङ्गद ने अपने नगर को लौटने की इच्छा त्यागकर उन्हीं भगवान् अरुणाचलनाथ के चरणों के समीप रहना पसंद किया। तदनन्तर रथ, हाथी, घोड़े और पैदल से भरी हुई उनकी विशाल चतुरङ्गिणी सेना घोड़े के मार्ग का अनुसरण करती हुई वहाँ आ पहुँची। पुरोहित, मन्त्री, सामन्त, सेनापति तथा सुहृदों ने धैर्यसिन्धु महाराज वज्राङ्गद का उस अवस्था में दर्शन किया। तब वहाँ आयी

हुई सेना को राजा ने आदरपूर्वक अरुणाचल क्षेत्र के बाहर ही ठहराया और भक्तियुक्त होकर अपने सम्पूर्ण कोश तथा समृद्धिशाली देशों को भगवान् अरुणाचलनाथ की पूजा के लिये संकल्प कर दिया। उन्होंने गौतमजी के आश्रम के निकट अपने लिये एक तपोवन बनाया और पुरोहित के कथनानुसार मन्त्रीसहित वे भगवान् शिव की पूजा में तत्पर हो गये। अपने पद पर उन्होंने राजकुमार रत्नाङ्गद को बैठा दिया और उसके भेजे हुए धन से भी भगवान् अरुणाचलनाथ को ही तृप्त किया। राजा ने अरुणाचल के चारों ओर जल से भरे हुए जलाशय खुदवाये और ब्राह्मणों को बहुत से दान दिये। अग्निस्तम्भरूपी अरुणाचलनाथ के तेज से यद्यपि वह देश मरुभूमि की भाँति निर्जल सा हो गया था तथापि वहाँ राजा वज्राङ्गद ने सैकड़ों बावलियों का निर्माण कराया। उस समय लोपामुद्रा के साथ आये हुए महर्षि अगस्त्य ने अरुणाचलेश्वर की पूजा में लगे हुए राजा का अभिनन्दन किया। प्रतिदिन नयतीर्थ नामक सरोवर में स्नान करके वे पापनाशक श्रीप्रवालेश्वर का पूजन करते थे। समस्त दुर्गम पीड़ाओं का निवारण करनेवाली महिषासुरमर्दिनी भगवती दुर्गा की आराधना भी उनके द्वारा प्रतिदिन होती रहती थी। ब्रह्मा और भगवान् विष्णु की प्रार्थना से लिङ्गरूप में प्रकट हुए आदिदेव भगवान् शिव की वे प्रतिक्षण नाना प्रकार की सेवा-पूजा किया करते थे। प्रतिदिन सबेरे उठते और स्नान करके पञ्चाक्षरमन्त्र का जप करते हुए अरुणाचलनाथ की तीन बार परिक्रमा करते थे। कार्तिक की पूर्णिमा आने पर राजा ने पार्वतीवल्लभ शिव के महादीपोत्सव का आयोजन किया, जो तीनों लोकों में पूजित एवं प्रशंसित है। कस्तूरी, कह्लार-पुष्प, कर्पूर और जल से भरे हुए एक हजार स्वर्णकलशों से उन्होंने भगवान् त्रिलोचन का अभिषेक किया। प्रत्येक मास में राजा ध्वजारोपणपूर्वक तीर्थोत्सव आदि का प्रबन्ध करते तथा रथ पर भगवान् की सवारी निकालते थे। उस समय रथारोहण का बड़ा भारी उत्सव मनाया जाता था। यह उत्सव तीनों लोकों में विशेष सम्मानित है। महामना राजा वज्राङ्गद ने तीन योजनतक फैले हुए अरुणाचल की प्रदक्षिण भी की। उस समय वे 'हे अरुणाचलनाथ! हे करुणामृतसागर! हे अरुणाचलम्बा के प्राणनाथ!' इस प्रकार पुकारते हुए बार-बार भगवान् की स्तुति करते थे। भाँति-भाँति के द्रव्यों से भगवान् के अङ्गों में आलेपन करके पञ्चामृत आदि के द्वारा उनका अभिषेक करते तथा कपूर का चूर्ण मिलाने से उज्ज्वल प्रतीत होनेवाले कस्तूरी के चन्दन से भगवान् की पूजा करते थे। एक लिङ्गस्वरूप अरुणाचलनाथ की पीठ से लेकर सम्पूर्ण अङ्गोंतक वे कस्तूरी और कह्लार-पुष्पों से भलीभाँति अर्चना करते थे। इस प्रकार तीन वर्षोंतक निरन्तर सेवा करने से सन्तुष्ट होकर अरुणाचलनाथ ने राजा को प्रत्यक्ष दर्शन दिया। वे हिमालय के समान श्वेत वृषभराज की पीठ पर चढ़कर अपने पीछे बैठी हुई पार्वतीदेवी से सटे हुए थे। वसिष्ठ आदि ब्रह्मर्षि, नारद आदि महर्षि तथा निकुम्भ, कुम्भ आदि गण उनकी जय-जयकार एवं स्तुति कर रहे थे। कमल के समान विकसित एवं विशाल नेत्रों के कटाक्षपात मानो करुणासिन्धु की उठती हुई तरङ्ग थे और उनके द्वारा भगवान् शिव सम्पूर्ण जगत् की मलिनता का निवारण-सा कर रहे थे। इस प्रकार देवाधिदेव महादेव

को उपस्थित देखकर महाराज वज्राङ्गद को बड़ा हर्ष हुआ। उन्होंने भगवान् को साष्टाङ्ग प्रणाम किया और मस्तक पर अञ्जलि बाँधकर कहा–'देवेश! मैंने जो मोहवश आपके समीप सवारी पर बैठकर विचरण किया है, उस मेरे एकमात्र अपराध को आप क्षमा करें।'

इस प्रकार अत्यन्त दीन भाव से बोलनेवाले राजा से करुणानिधान जगदीश्वर भगवान् अरुणाचलेश्वर ने कहा–वत्स! भय न करो, तुम्हारा कल्याण हो। मेरी आठ मूर्तियाँ हैं। वे सब सम्पूर्ण जीवों के कल्याण के लिये कल्पित हुई हैं। पूर्वकाल में तुम इन्द्र थे और अहङ्कारवश तुमने कैलास शिखर पर बैठे हुए मेरा अपमान किया। तब मैंने उसी समय तुम्हें स्तम्भित करके जड़वत् बना दिया। तुम्हारा सारा अभिमान और पापभार क्षणभर में गल गया और तुम लज्जित होकर मेरे समीप बैठ गये। उस समय मैंने तुम्हें समस्त ऐश्वर्यों के कारणभूत शिवज्ञान का उपदेश किया और यह आज्ञा दी कि तुम पृथ्वी पर जन्म ले राजा वज्राङ्गद होकर मेरी कृपा प्राप्त करोगे। इस समय तुम्हारी की हुई दिन-रात की सेवाओं से मैं तुम पर बहुत प्रसन्न हूँ। अतः तुम्हें यह ज्ञान देता हूँ, सुनो। आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी, सूर्य, चन्द्रमा और पुरुष–इन मेरी आठ मूर्तियों से व्याप्त होकर सम्पूर्ण चराचर जगत् प्रकाशित होता है। मैं इन सब तत्त्वों से परे शिव हूँ, मुझसे भिन्न दूसरी कोई वस्तु नहीं है। मेरे स्वरूपभूत चिदानन्द समुद्र से उठी हुई कुछ लहरें ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र और इन्द्र आदि सम्पूर्ण देवताओं को आनन्द से परिपूर्ण करती हैं। मैं समस्त संसार का स्वामी हूँ। यह गौरीदेवी मेरी महाशक्ति माया हैं। इन्हीं के द्वारा सम्पूर्ण विश्व सदा आच्छादित होता और विस्तार को प्राप्त होता है। इन महाशक्ति के द्वारा सदा सृष्टि, रक्षा और संहाररूप लीलाविलासों से अत्यन्त विचित्र रूप में प्रस्तुत किये हुए इस जगत् को मैं स्वेच्छा से देखता रहता हूँ। तुम अपने आपको मेरी महिमा से उसी प्रकार अभिन्न देखो जैसे समुद्र की तरङ्ग उससे भिन्न नहीं होती। ऐसी दृष्टि हो जाने पर यह सारी पृथ्वी तुम्हें मेरे ही रूप से सुशोभित दिखायी देगी और उस पर मेरी कृपा से प्रभुत्व प्राप्त करके तुम उत्तम भोगों का सुख से उपभोग करोगे। इसके बाद तुम्हें पुनः इन्द्ररूप से दिव्य सुखदायी भोग दीर्घकाल के लिये प्राप्त होंगे। तदनन्तर तुम मुझसे एकरूपता एवं विशुद्ध चिन्मयता प्राप्त कर लोगे।

यों कहकर भगवान् शङ्कर अन्तर्धान हो गये और पुण्यात्मा राजा वज्राङ्गद ने भगवान् अरुणाचलनाथ की आराधना करते हुए ही समस्त भोगों को प्राप्त किया। अरुणाचल से बढ़कर दूसरा क्षेत्र नहीं है। अरुणाचलेश्वर से बढ़कर और कोई देवता नहीं है तथा उनकी परिक्रमा से अधिक तीनों लोक में दूसरा कोई तप नहीं है।

(उपर्युक्त कथा गीताप्रेस, गोरखपुर से प्रकाशित कल्याण के संक्षिप्त स्कंदपुराणांक के माहेश्वरखण्ड के अरुणाचलमाहात्म्यखण्ड के पृष्ठ 203–206 पर आधारित है।)

❁❁❁❁❁❁